**ओ३म्**

**“सृष्टि का उत्पत्ति, पालन व प्रलयकर्ता होने से ईश्वर**

**ही सब मनुष्यों का उपासनीय”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 मनुष्य को ज्ञान की आवश्यकता होती है। यह ज्ञान वह मुख्य रूप से अपने माता-पिता व आचार्यों से प्राप्त करता है। मनुष्य अल्पज्ञ है, इस कारण समय के साथ साथ उसमें विस्मृति का होना भी होता है। माता-पिता व आचार्य अल्पज्ञ प्राणी होते हैं। अतः अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए सर्वज्ञानमय की संगति की आवश्यकता होती है। सर्वज्ञानमय ऐसी सत्ता केवल ईश्वर ही है। वह ज्ञान का आदि श्रोत तो है ही, साथ ही स्वयं में सर्वज्ञानमय भी है। अतः ज्ञानादि अधिकतम् सद्गुणों की प्राप्ति के लिए उसे ज्ञान के प्रमुख स्रोत ईश्वर की शरण लेनी पड़ती है। ईश्वर की शरण में जाने का अर्थ ही ईश्वर की उपासना करना है। बिना ईश्वर की उपासना के मनुष्य ईश्वर की संगति को प्राप्त नहीं कर सकता। इस सृष्टि पर ध्यान केन्द्रित करने व वेदादि शास्त्रों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, अनादि, नित्य, सर्वज्ञ, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, सर्वव्यापक, निराकार एवं सर्वान्तर्यामी है। अतः उसकी उपासना के लिए कहीं दूर जाना नहीं है। किसी भी स्थान पर उसके गुणों का ध्यान कर उससे सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है और उसकी स्तुति सहित प्रार्थना की जा सकती है। ईश्वर सर्वान्तर्यामी स्वरूप से हमारी सारी बातों को सुनता ही नहीं अपितु वह हमारे हृदय के भावों को बिना कहे व बोले ही जानता व समझता भी है। उसे जो कहना होता है उसकी प्रेरणा वह हमारी आत्मा में कर देता है। जिस मनुष्य का मन, हृदय वा आत्मा शुद्ध व पवित्र होता है वह ईश्वर की प्रेरणा को जान व समझ लेता है। यदि आत्मा स्वच्छ व पवित्र न हो तो ईश्वर की प्रेरणाओं को जाना व समझा नहीं जा सकता। यह भी हम सभी का अनुभव है कि जब हम कोई अच्छा परोपकार या भलाई का काम करते हैं तो ईश्वर की ओर से हमें सुख, आनन्द, उत्साह, व निःशंकता की प्रेरणा अनुभव होती है। कोई बुरा काम करने पर हमारी उसी आत्मा में आनन्द व उत्साह के स्थान पर भय, शंका व लज्जा उत्पन्न होती है जो आत्मा व हृदय में विद्यमान सर्वव्यापक ईश्वर के द्वारा ही होती है। अतः योगाभ्यास द्वारा ईश्वर की उपासना कर आत्मा व अन्तःकरण को ईश्वर के गुणों के अनुरूप शुद्ध व पवित्र बनाया जा सकता है और तब वह मनुष्य जिस विषय का चिन्तन व मनन करता है, ईश्वर की प्रेरणा से उसे उस विषय का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। हमारे वैज्ञानिक नये नये आविष्कार इसी प्रकार से करते हैं। वह ईश्वर न जानते हैं और न मानते ही हैं परन्तु विषय का चिन्तन, मनन व ध्यान अवश्य करते हैं। जब वह किसी विषय का चिन्तन करते हुए उसमें खो जाते हैं तो उनके उस पुरुषार्थ व तप से सन्तुष्ट व प्रसन्न होकर ईश्वर उन्हें अभीष्ट की प्राप्ति कराता है। हमारे जितने भी प्राचीन ज्ञानी व चिन्तक हुए हैं वह ईश्वर सहित अभीष्ट विषय के चिन्तन व मनन द्वारा ही खोज करते रहे हैं व उसमें सफल होते रहे हैं।

ईश्वर सर्वातिसूक्ष्म होने से दिखाई नहीं देता है। दिखाई न देने पर भी यह सारा संसार उसका पता बता रहा है कि वह हर वस्तु के भीतर व बाहर विद्यमान है। इस ब्रह्माण्ड के सभी सूर्य, पृथिव्यां व चन्द्रमाओं को उसी ने बनाकर धारण कर रखा है। पृथिवी पर जो वनस्पतियां, वायु, अग्नि, जल व अन्य अपौरुषेय पदार्थ हैं, उनका आदि निमित्त कारण भी वही है। उसी परमात्मा से संसार में सभी मनुष्यादि प्राणी अपने पूर्व जन्मों के कर्मानुसार जन्म पाते हैं और जन्म के बाद वृद्धि को प्राप्त होते हुए प्रारब्घ के कर्मों के अनुसार सुख व दुः,ख पाते हैं। सभी प्राणियों के शरीरों को भी ईश्वर ने ही बनाया है। हम भोजन करते हैं परन्तु उस भोजन का पाचन व नाना प्रकार के रस बनना व उनसे रक्त, अस्थि, मज्जा, रज-वीर्य, व मल-मूत्र बनकर शरीर में बल व सुख आदि की प्राप्ति सब उसकी व्यवस्था से ही सम्पन्न होती आ रही है। गाय घांस व वनस्पतियां खाती है और उसका शारीरिक बल व बुद्धिवर्धक दूध बन जाता है। ऐसा गुणकारी दूध जिसे सारे संसार के वैज्ञानिक मिलकर भी नहीं बना पाये। न केवल दुग्ध ही अपितु गाय से तो गोमूत्र व गोबर सहित सन्तानों के रूप में बछिया व बछड़े भी मिलते हैं जो बड़े होकर गाय व बैल बनकर हमारे अनेक प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। हमारी श्वसन प्रणाली को ईश्वर ने ही बनाया है और वायु को भी उसी ने बनाया व बहाया है। सारे संसार में सर्वत्र वायु को सुलभ किया है जिससे हम कहीं भी जायें, हमें कष्ट न हो। श्वांस लेने व छोड़ने का कैसा अद्भुद यन्त्र व व्यवस्था परमात्मा ने की है। वायु श्वास के माध्यम से फेफड़ों में जाती है और सारे शरीर का दूषित रक्त फेफड़ों में आता है। वायु व दूषित रक्त परस्पर मिलते हैं, रसायनिक क्रिया होती है, रक्त शुद्ध हो जाता है, शुद्ध रक्त धमनियों में चला जाता है और दूषित वायु कार्बन डाई आक्साइड के रूप में बाहर निकल जाती है जो वृक्ष और वनस्पतियों का भोजन होती है। ऐसा कभी नहीं होता कि रक्त नाक से बाहर आ जाये और कार्बन डाई आक्साइड धमनियों में चली जाये। यह ईश्वरीय व्यवस्था का कमाल है। इसी प्रकार के अन्य यन्त्र व अवयव भी बने हैं व काम कर रहे हैं। इस प्रकार जब हम विचार करते हैं तो हमें परमात्मा द्वारा किये वैज्ञानिक चमत्कार देखकर हैरानी होती है और मन स्वतः कह उठता है कि हे ईश्वर ! तुम महान हो, कोई तुम्हारे समान इस पूरे ब्रह्माण्ड में नहीं है। हम आपको नमन करते हैं।

बहुत से अल्पज्ञानी बन्धु तर्क करते हैं कि ईश्वर है तो दिखाई क्यों नहीं देता? उन्हें प्रकृति व विज्ञान का यह नियम ज्ञात होना चाहिये कि बिना कर्त्ता के कोई क्रिया नहीं होती। यह संसार का बनना और इसका पालन, असंख्य प्राणियों के जन्म व मृत्यु के रूप में ईश्वर हर क्षण व हर पल जो क्रियायें कर रहा है उसका कर्त्ता ईश्वर के अलावा कौन है? अर्थात् वही इन सब अपौरुषेय कार्यों को कर रहा है। ईश्वर के दिखाई न देने का कारण उसका सूक्ष्म-अतिसूक्ष्म होना है। आंखे स्थूल वस्तुओं को ही देख पाती हैं। वायु को आंख से नहीं देखा जा सकता। जो शब्द वह कानों से सुनता है, उसे देखता नहीं है। इस पर भी आंखे बन्द कर जब वह फोन पर किसी मित्र व परिचित की आवाज सुनता है तो जान लेता है कि अमुक परिचित व्यक्ति के यह शब्द व आवाज है। यह एक प्रकार से शब्दों का देखना ही है क्योंकि शब्द आंख का नहीं कान का विषय है। इसी प्रकार मानव शरीर व उसमें आंख आदि रचना विशेष को देखकर इनके रचयिता ईश्वर का ज्ञान होता है। इस पर भी जो निर्बुद्धि ईश्वर को न माने वह अज्ञान में लिप्त रहें, उन्हें कौन समझा सकता है? ईश्वर को आंख से नहीं बुद्धि से देखना होगा व उसे बुद्धि से देखा जा सकता है।

उपासना कहते है अपने आपको बाहर व भीतर से स्वच्छ व पवित्र बनाकर ईश्वर का ध्यान, उसके गुणों, स्वरूप व उपकारों आदि का चिन्तन व मनन करना और ऐसा करते हुए उसके ध्यान में स्थिर हो जाना। इस अवस्था में पांच ज्ञान इन्द्रियां अपने विषयों से पृथक व दूर रहें, यह स्थिति बनना ही ईश्वर की उपासना है। यह एक प्रकार से ईश्वर के उपकारों के प्रति धन्यवाद करना, उसके प्रति कृतज्ञ होना है और साथ ही उपासना करके अपने अवगुणों व दुःखों को दूर करना भी इसका उद्देश्य होता है। यह ईश्वर की संगति से सम्भव इसलिए होता है कि ईश्वर अवगुणों व दुःखों से रहित है और संगति करने से दूसरे के गुण हमारे अन्दर आ जाते हैं। अग्नि के समीप बैठने व शीत स्थान पर जाने पर जो गर्मी व ठण्ड लगती है उसका कारण उन पदार्थों की संगति ही होती है। यह लाभ अन्य किसी प्रकार से नहीं होता है। अतः दुःखों से निवृति व ज्ञान की प्राप्ति आदि लाभों को प्राप्त करने के लिए ईश्वर की सगति अर्थात् उसकी उपासना करनी आवश्यक व अनिवार्य है अन्यथा उपासना के लाभ न मिलने पर हम अपनी ही हानि करेंगे। यह भी विचार करने योग्य बात है कि जिस प्रकार माता, पिता, आचार्यों व अनेक व्यक्तियों का हम पर उपकार, ऋण आदि होता है उससे कहीं अधिक ईश्वर का हम पर उपकार व ऋण है जिसे हम अन्य किसी प्रकार से चुका नहीं सकते। इसका उपाय ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, वेदों का स्वाध्याय व उसके अनुसार परोपकार आदि के कार्य एवं साथ ही यज्ञ आदि श्रेष्ठ कर्मों को करना है। यह मार्ग ईश्वर ने वेद में बताया है जिसका विस्तार हमारे ऋषियों ने अनेक ग्रन्थ लिखकर किया है। वैदिक सब वेद ज्ञान व सत्य वैदिक परम्परायें ऋषि दयानन्द के आविर्भाव के समय विलुप्त होने के कगार पर थे। ऋषि दयानन्द ने घोर तप करके इसे प्राप्त कर हमें पुनः सुलभ कराया है। हमें इसे दैनन्दिन व्यवहार में लाकर न केवल इसकी सुरक्षा करनी है अपितु इसका प्रचार कर अपनी सन्तानों व भावी पीढ़ियों के लिए भी सुरक्षित रखना है अर्थात् इसे विलुप्त व नष्ट नहीं होने देना है। यह हमारा मुख्य कर्तव्य है। यह जान लेने पर आईये! ईश्वर की उपासना का व्रत लें। वेद एवं वैदिक ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, आर्याभिविनय एवं पंचमहायज्ञ विधि आदि का नियमित स्वाध्याय कर अपने ज्ञान में वृद्धि करें और यज्ञ आदि श्रेष्ठ कर्मों को करते हुए जीवन व्यतीत करें। इति ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**